शमशेर बहादुर सिंह

जन्म	:	13 जनवरी 1911 ।
निधन	:	1993 ।
जन्म-स्थान	:	देहरादून, उत्तराखंड ।
माता-पिता	:	प्रभुदेई एवं तारीफ सिंह (कलेक्ट्रिएट में रीडर और साहित्य प्रेमी) ।
शिक्षा	:	1928 में हाई स्कूल, 1931 में इंटर, 1933 में बी० ए० (इलाहाबाद से), 1938 में एम० ए० (पूर्वार्ध) अंग्रेजी, आगे पढ़ाई न चल सकी ।
पारिवारिक जीवन	:	1929 में धर्म देवी से विवाह । 1933 में पत्नी की मृत्यु । फिर परिवार विहीन अनिश्चित जीवन ।
वृत्ति	:	रूपाभ, कहानी, माया, नया साहित्य, नया पथ एवं मनोहर कहानियाँ के संपादन कार्य से जुड़े । उर्दू-हिंदी कोश का भी संपादन । 1981-85 तक 'प्रेमचंद सृजनपीठ' विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन के अध्यक्ष ।
यात्रा	:	1978 में सोवियत रूस की यात्रा ।
कृतियाँ	:	1932-33 में लिखना शुरू किया । दूसरा सप्तक (1951), कुछ कविताएँ (1959), कुछ और कविताएँ (1961), चुका भी नहीं हूँ मैं (1975), इतने पास अपने (1980), उदिता (1980), बात बोलेगी (1981), काल तुझसे होड़ है मेरी (1982), टूटी हुई बिखरी हुई, कहीं बहुत दूर से सुन रहा हूँ, सुकून की तलाश (गजलें) । प्रतिनिधि कविताएँ (सं०-डॉ० नामवर सिंह) – सभी कविताएँ । डायरी, विविध प्रकार के निबंध एवं आलोचना भी फुटकर रूप में प्रकाशित ।

अज्ञेय, नागार्जुन आदि के समकालीन शमशेर बहादुर सिंह आधुनिक हिंदी कविता में स्वच्छंद चेतना के प्रयोगशील कवि के रूप में 'दूसरा सप्तक' में उदित हुए थे । बीसवीं शती के उत्तरार्ध में सतत प्रयोगधर्मी श्रेष्ठ प्रगतिशील कवि के रूप में उन्होंने व्यापक प्रतिष्ठा अर्जित की । उन्होंने लिखना तीस के दशक में ही शुरू कर दिया था किंतु आजीविका, आवास, पारिवारिक जीवन आदि के अनिश्चय, अभाव तथा प्रकाशन को लेकर उदासीनता भरे विशिष्ट स्वभाव के कारण उनकी कविताएँ पुस्तकाकार शती के उत्तरार्ध में ही आनी शुरू हुईं । शीघ्र ही शमशेर बहादुर सिंह हिंदी के विशिष्ट और प्रमुख कवि के रूप में प्रतिष्ठित हो गए । विशिष्टता उनके लेखन में कवि और काव्य के स्वभाव एवं आग्रहों के कारण निरूपित हुई । वे कवि और शायर एक साथ थे । स्वच्छंदतावाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता तथा वस्तुवादी यथार्थवाद और कलावादी रूपवाद – इन सबका एक ऐसा विलक्षण घोल उन्होंने अपनी सर्जनात्मकता में तैयार किया जिसमें इन सब की सीमाएँ नहीं, शक्ति सक्रिय और मुखरित हुई । हिंदी और उर्दू को तथा इनकी कविता शैलियों और संस्कृतियों को उन्होंने एक माना ही नहीं, जाना और अनुभव भी किया । कवि के लिए दोनों दो नहीं, एक हैं; इसी रूप में शमशेर के यहाँ उनकी अभिव्यक्ति भी होती है । भेद है सिर्फ शैली का; ऊपरी । भीतरी एकता अखंड और अक्षुण्ण है । उर्दू काव्य और आधुनिक हिंदी काव्य की विरासत को उन्होंने मिजाज, रंग, स्वर, लय और

भंगिमाओं के साथ अपनी खास संवेदना और कल्पनाशीलता के सहारे अपने ढंग से आत्मसात् किया । उनके समकालीन जहाँ 'छायावाद' से खुद को विलगाने और अलग-थलग, विशिष्ट दिखने के प्रति आग्रहशील रहे वहाँ शमशेर ने एक ही संधान में निराला और पंत दोनों को साधा । कविता, चित्र, संगीत, नाटक, नृत्य, मूर्ति आदि विविध कलाओं के सर्जनात्मक प्रभाव उन्होंने अपनी कविता की स्वायत्त जमीन और शर्तों पर ग्रहण किए । स्थानीय और सार्वभौम, क्षणिक और सनातन, जटिल और सरल, ठोस और वायवीय, मूर्त और अमूर्त, ऐंद्रिय और आध्यात्मिक–तमाम तरह के विरोधों को अपने विलक्षण वस्तु विधान और ऐंद्रिय संस्पर्श के साथ, कल्पना प्रवण अनुभूति के रंग में डुबोकर एक सजीव संरचना में ढाल देते हैं । उनमें अद्‌भुत कला संयम, संक्षिप्ति और सांकेतिकता है । उनकी कविताएँ एक अनिवार्य चुनौती की तरह दिपदिपाती रहती हैं, ऐसी चुनौती जिसे नजरअंदाज करना मुश्किल हो । वे कई-कई पाठों में भी अक्सर निःशेष नहीं होतीं । उनमें कुछ चमकता रह जाता है जो अर्थपूर्ण प्रतीत होता है । प्राय: उनके समकालीनों से लेकर अब तक के सभी महत्त्वपूर्ण आलोचकों और चिंतनशील सर्जकों ने उनपर अवश्य लिखा है और उनकी कविता को समझने-समझाने की कोशिशें की हैं । वे 'कवियों के कवि' कहे जाते हैं ।

यहाँ उनकी प्रसिद्ध कविता 'उषा' संकलित है जिसमें उन्होंने 'उषा' का गतिशील चित्रण बिंबों द्वारा प्रस्तुत किया है । यह चित्रण एक प्रभाववादी चित्रकार की तरह किया गया है । प्रभाववादी चित्रकार वस्तु या दृश्य के मन और संवेदना पर पड़े प्रभावों का उनकी विशिष्ट रंग-रेखाओं के सहारे चित्रण करता है । उषा में एक जादू है जिसमें विमुग्ध-तल्लीन कविदृष्टि उसके साथ-साथ बढ़ती और उसे सजग ऐंद्रियबोध और मानस में जज्ब करती जाती है । कविता का समापन इस जादू से गुजरते हुए बाहर निकल आने पर होता है । उषा के साथ-साथ क्रमशः चलती यह यात्रा एक संतृप्तिकर सौंदर्य यात्रा हो जाती है ।

◆ ◆ ◆

"शमशेर ऐसे कवि हैं जो अपना असर धीरे-धीरे डालते हैं । शमशेर जैसे कवियों का कोई 'स्कूल' नहीं बनता, उनकी कोई पंथ-प्रतिमा नहीं बनती । वे उन नदियों की तरह होते हैं जो चुपचाप पूरी घाटी को जरखेज करती चलती हैं, जिनपर कभी कोई पुल नहीं बनता ।"

– अरुण कमल

उषा

प्रात नभ था बहुत नीला शंख जैसे

भोर का नभ

राख से लीपा हुआ चौका
[अभी गीला पड़ा है]

बहुत काली सिल जरा से लाल केसर से
कि जैसे धुल गई हो

स्लेट पर या लाल खड़िया चाक
मल दी हो किसी ने

नील जल में या किसी की
गौर झिलमिल देह
जैसे हिल रही हो ।

और....

जादू टूटता है इस उषा का अब
सूर्योदय हो रहा है ।

अभ्यास

कविता के साथ

1. प्रात: काल का नभ कैसा था ?
2. 'राख से लीपा हुआ चौका' के द्वारा कवि ने क्या कहना चाहा है ?
3. बिंब स्पष्ट करें–

   'बहुत काली सिल जरा से लाल केसर से कि जैसे धुल गई हो'
4. उषा का जादू कैसा है ?
5. 'लाल केसर' और 'लाल खड़िया चाक' किसके लिए प्रयुक्त है ?
6. व्याख्या करें–

   (क) जादू टूटता है इस उषा का अब
सूर्योदय हो रहा है

   (ख) बहुत काली सिल जरा से लाल केसर से
कि जैसे धुल गई हो
7. इस कविता की बिंब योजना पर टिप्पणी लिखें ।
8. प्रात नभ की तुलना बहुत नीला शंख से क्यों की गई है ?
9. नील जल में किसकी गौर देह हिल रही है ?
10. कविता में आरंभ से लेकर अंत तक की बिंब-योजना में गति का चित्रण कैसे हो सका है ? स्पष्ट कीजिए ।

कविता के आस-पास

1. कवि की पाँच अन्य कविताएँ संकलित करें एवं कक्षा में उनका पाठ करें ।
2. शमशेर बहादुर सिंह बिंबों और मितकथनों के लिए प्रसिद्ध हैं, उनकी कविताओं से ऐसे कुछ उदाहरण चुनें और मित्रों से इस पर चर्चा करें । इसके लिए आप पुस्तकालय एवं अपने शिक्षक की मदद लें ।
3. उषा काल पर जयशंकर प्रसाद की एक प्रसिद्ध कविता **'बीती विभावरी जाग री'** और अशोक वाजपेयी की एक गद्य कविता **'सुबह'** यहाँ दी जा रही हैं । इन्हें भी पढ़ें और प्रस्तुत कविता से इनकी तुलना करें ।

बीती विभावरी जाग री !
अंबर पनघट में डुबो रही
तारा-घट उषा-नागरी
खग-कुल कुल-कुल सा बोल रहा
किसलय का अंचल डोल रहा
लो यह लतिका भी भर लाई
मधु मुकुल नवल रस गागरी ।
अधरों में राग अमंद पिए,

अलकों में मलयज बंद किए
तू अब तक सोई है आली !
आँखों में भरे विहाग री !

सुबह

सुबह थी । उजाले, हलकी सुगबुगाहट और जागरण के साथ । पर सबके लिए नहीं । घूमनेवाले अधेड़ों, स्कूल जानेवाले बच्चों के लिए थी : चिड़ियों-तोतों के लिए थी और शायद दूर तक फैली हुई हरियाली के लिए । वनस्पतियों और वृक्षों को भी शायद पता था कि सुबह हो गई है । पर मेज को, गिलासों-तश्तरियों को, कागजों के पुलिंदों और गरम मसालों को कहाँ पता था कि सुबह है । उन्हें कभी पता नहीं चलता । अचार को कोई नहीं बताता कि सुबह हो गई है और उसे कुछ करना चाहिए–उदाहरण के लिए कुछ देर तेल-नमक से बाहर घूम आना चाहिए । मिट्टी के गहरे अँधेरे में डूबी जड़ें नहीं जान पातीं कि ऊपर-बाहर धूप खिल रही है । सुबह सबकी सुबह नहीं है : कुछ के लिए कभी सुबह नहीं है । कुछ के लिए कोई सुबह नहीं है । समय भी सबके लिए नहीं है । कुछ समय के घेरे से ऐसे बाहर पड़े रहते हैं जैसे हों ही न । या कि समय ही न हो ।

4. 'उषा' का अंकन आप किस तरह करना चाहेंगे । कविता, निबंध या फिर फोटोग्राफी के द्वारा; इसे विद्यालय के सूचना पट्ट पर लगाएँ ।
5. 'सुबह की सैर' विषय पर एक छोटा निबंध लिखकर अपने शिक्षक को दिखाएँ । निबंध में आपके अपने अनुभवों की अभिव्यक्ति होनी चाहिए ।

भाषा की बात

1. कविता से संयुक्त क्रियाओं को चुनें ।
2. निम्नलिखित शब्दों से वाक्य बनाएँ–
   नभ, राख, चौका, देह, उषा ।
3. व्युत्पत्ति की दृष्टि से इन शब्दों की प्रकृति बताएँ–
   नीला, शंख, भोर, चौका, स्लेट, जल, गौर, देह, जादू, उषा ।
4. कविता में प्रयुक्त उपमानों को चुनें ।
5. सूर्योदय का संधि-विच्छेद करें ।

शब्द निधि

सिल : पत्थर की पट्टी जिस पर मसाला पीसा जाता है
खड़िया : खल्ली, जिससे स्लेट पर लिखा जाता है
चौका : वह स्थान जहाँ रसोई बनती है । उसे राख, गोबर, मिट्टी आदि से लीपा जाता है । गाँव के घरों में ऐसे चौके मिल जाते हैं ।